भारतीय दर्शन का विभाजन

भारतीय दर्शन का विभाजन हम दो प्रकार से कर सकते हैं—

(१) काल की दृष्टि से (२) आस्तिक-नास्तिक दृष्टि से।

(१) काल की दृष्टि से विभाजन

भारतीय दर्शन के इतिहास को हम निम्न कालों में बाँट सकते हैं—

(क) वैदिक काल—

वेद प्राचीनतम मनुष्य के श्रेष्ठतम दार्शनिक विचारों का मानव भाषा में पहला वर्णन है। इसलिए वेद को परम सत्य मानकर आस्तिक-दर्शनों ने प्रमाण के रूप में स्वीकार किया जाता है। यहाँ पर वेद से अभिप्राय संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् हैं। दर्शन जहाँ संहिताओं में बीज रूप में विद्यमान है, वहीं उपनिषदों में उसकी चरम सीमा दिखाई देती है। वैदिक दर्शन के विचारों के अध्ययन से स्पष्ट है कि वेद परमात्मा प्रदत्त ज्ञान है। नहीं तो उनके द्वारा चरम तत्व के साक्षात्कार अनुभव में इतनी तल-स्पर्शिता, रोचकता तथा सरलता नहीं होती।

(ख) महाकाव्य काल—

भारतीय दर्शन का दूसरा काल महाकाव्य काल है। इस काल में रामायण और महाभारत जैसे धार्मिक ग्रन्थों की रचना हुई। गीता दर्शन के रूप में सारे संसार में प्रसिद्ध है। बौद्ध और जैन दर्शन इसी काल की देन है।

(ग) सूत्रकाल—

इस काल को हम अवान्तर दो विभागों में बाँट सकते हैं—(i) सूत्रकाल (ii) वृत्तिकाल। सूत्रकाल में सांख्य-योग-न्याय-वैशेषिक-मीमांसा व वेदान्त की रचना

Scanned with CamScanner

हुई। उपनिषदों में सूचित तथ्यों को ग्रहण कर दार्शनिकों ने विभिन्न मतों की स्थापना की। इसी अभिप्राय से वृत्तिकाल में सूत्रों के अत्यन्त गूढ़ रहस्य को समझने के लिए भाष्यकारों ने सूत्रों पर अपनी टीकाएँ लिखीं।

(२) भारतीय दर्शनों का आस्तिक-नास्तिक विभाजन—

साधारण बोलचाल की भाषा में 'आस्तिक' ईश्वर की सत्ता मानने वाले को तथा 'नास्तिक' उसकी सत्ता के निषेध करने वाले को कहते हैं। परन्तु इस प्रचलित अर्थों में इन शब्दों का प्रयोग दर्शनों के साथ नहीं किया गया है। आस्तिक दर्शनों में अन्तर्भुक्त होने पर भी कर्म-मीमांसा कर्म की महत्ता स्वीकार कर तथा फल के लिए 'अपूर्व' की कल्पना को प्रमाणयुक्त मानकर ईश्वर का निषेध करती है तथा सांख्य प्रकृति और पुरुष के पारस्परिक संयोग से सृष्टिकार्य की सुसम्पन्नता मानकर ईश्वर की आवश्यकता को स्वीकार करने के लिए उद्यत नहीं है। बौद्ध, जैन तथा चार्वाक दर्शनों के लिए ईश्वर सत्ता के निषेध होने के हेतु से 'नास्तिक' शब्द प्रयोग के उपयुक्त भले हो, परन्तु मीमांसा तथा सांख्य का आस्तिक दर्शनों में अन्तर्भाव इस दृष्टि से नितान्त अनुचित होगा।

पाणिनि ने आस्तिक शब्द की व्याकरण-शास्त्रीय व्याख्या अपनी अष्टाध्यायी में की है। 'अस्ति परलोक इति मतिर्यस्य स आस्तिकः'[१] अर्थात् परलोक की सत्ता में विश्वासशील पुरुष। आस्तिक, नास्तिक शब्दों की व्युत्पत्ति 'अस्ति नास्ति दिष्टं मतिः'[१] सूत्र से ठक् प्रत्यय द्वारा सिद्ध मानी गई है। इस व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ के व्यवहृत होने पर जैन तथा बौद्ध दर्शनों को भी गणना आस्तिक मतों में होने लगेगी, क्योंकि इन दर्शनों

---

१. पाणिनि अष्टाध्यायी ४.४.६०

में भी अन्य दर्शनों के समान कर्मसिद्धान्त अंगीकृत है तथा परलोक की सत्ता में इन्हें पक्का विश्वास है। इस दृष्टि से चार्वाक दर्शन ही नास्तिक दर्शन ठहरेगा।

अतः यहाँ 'आस्तिक' शब्द का प्रयोग पूर्वोक्त दोनोंअर्थों में न होकर एक तीसरे ही अर्थ में किया जाता है। 'आस्तिक' वह है जो वेद की प्रमाणिकता में विश्वास करे तथा 'नास्तिक' वह है जो वेद की प्रमाणिकता का समर्थक न होकर उसका निन्दक है। मनु ने वेद-निन्दक' को नास्तिक माना है। इसी अर्थ में इसका प्रयोग यहाँ किया गया है। अतः वेद की प्रमाणिकता मानने वाले सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा तथा वेदान्त प्रधानतया आस्तिक दर्शन माने जाते हैं तथा वेद की प्रमाणिकता न मानने से मुख्यतः चार्वाक, जैन तथा बौद्ध नास्तिक माने जाते हैं। जैनदर्शन के लिए सर्वदर्शनसंग्रह कर्ता माधवाचार्य ने आर्हत दर्शन पद का प्रयोग किया है।

Scanned with CamScanner